

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 5 अध्याय 25: भगवान् अनन्त की महिमा

22 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



सातों पाताल-लोकों से बहुत नीचे, अपने सहस्र फणों में से केवल एक पर, भगवान् अनन्त समूची पृथ्वी को एक सरसों के दाने के समान सहज ही धारण किए हुए हैं — नील-श्याम, शान्त, और अपनी करुणा में असीम।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विङ्गडम् में पुनः आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। देदीप्यमान पाताल-लोकों से होकर हमें नीचे ले जाने के बाद, श्रीशुक अब अपनी दृष्टि समस्त वस्तुओं की मूल नींव पर टिकाते हैं — पाताल से भी बहुत नीचे उस प्रदेश पर, जहाँ भगवान् स्वयं अनन्त के रूप में समूची सृष्टि को धारण किए हुए हैं। यह छोटा-सा और तेजोमय अध्याय शुद्ध

स्तुति है: वह सहस्रफण भगवान् जो पृथ्वी को सरसों के दाने के समान उठाए हुए हैं, उनकी नील-श्याम सुन्दरता और एक ही कुण्डल, वे नाग-राज जो उनके चरणों में उपासना करते हैं, और वह गीत जो देवर्षि नारद ने कभी ब्रह्मा की सभा में उनकी महिमा का गाया। यह लोकों के सर्वेक्षण को किसी मानचित्र से नहीं, अपितु एक स्तुति-गीत से पूर्ण करता है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 5 (पंचम स्कन्ध)
- अध्याय: 25 (पंचविंश अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: भगवान् अनन्त की महिमा
- प्रमुख वक्ता: श्रीशुकदेव गोस्वामी (श्रीशुक), राजा परीक्षित को कथा सुनाते हुए; कथा के भीतर, देवर्षि नारद का अपना स्तुति-गीत (श्लोक 9-13) उद्धृत है
- प्रमुख श्रोता: राजा परीक्षित — और यह संवाद सूत गोस्वामी द्वारा नैमिषारण्य में एकत्रित ऋषियों को पुनः सुनाया जाता है
- मुख्य स्थल: पाताल से बहुत नीचे, सृष्ट लोकों के आधार पर, जहाँ भगवान् अनन्त (संकर्षण) निवास करते हैं; और नारद के गीत में, ब्रह्मा की सभा
- केन्द्रीय विषय: भगवान् अनन्त (संकर्षण) की महिमा, जो पृथ्वी को अपने सहस्र फणों में से केवल एक पर धारण करते हैं, जिनके क्रोध से प्रलय के रुद्र प्रकट होते हैं, जिनकी उपासना नाग-राज करते हैं, और जिनकी करुणा उन सबका उद्धार करती है जो उनके विषय में सुनते हैं
- प्रमुख श्लोक-सीमा: स्कन्ध 5, अध्याय 25, श्लोक 1-15
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

पिछले अध्याय से

चौबीसवें अध्याय में, श्रीशुक ने राहु और सुदर्शन चक्र की गति का वर्णन किया, और फिर हमें पृथ्वी के नीचे सात देदीप्यमान पाताल-लोकों से होकर ले गए। उनमें सबसे मनोहर है सुतल, वह धन्य लोक जहाँ महान् भक्त बलि निवास करते हैं, और जहाँ भगवान् स्वयं, प्रेमवश, उनके रक्षक के रूप में सदा निकट रहते हैं। उन उज्ज्वल अधोलोकों से अब कथा उनकी मूल नींव की ओर उतरती है, उस भगवान् की महिमा गाने जो उन सबको धारण किए हुए हैं।

पाताल के नीचे, लोकों को धारण करने वाले भगवान्

पाताल-लोक से तीस हज़ार योजन नीचे, श्रीशुक हमें बताते हैं, भगवान् का वह अंश-प्रकाश निवास करता है जो प्रलय के कार्य का अधिष्ठाता है — वह देव जो भगवान् अनन्त, “अन्तहीन,” नाम से जाने जाते हैं। सात्वत परम्परा के भक्त उन्हें प्रेमपूर्वक संकर्षण कहते हैं, “जो सबको एक साथ खींच लेते हैं,” क्योंकि वे ही द्रष्टा और दृश्य को एक करते हैं, उस “मैं”-भाव के अधिष्ठाता होकर जिससे प्रत्येक आत्मा स्वयं को जानती है। वे कोई दूरस्थ अमूर्त तत्त्व नहीं, अपितु उस सबके नीचे की कोमल नींव हैं जो कुछ भी है।

श्रीशुक उवाच

तस्य मूलदेशे त्रिंशद्योजनसहस्रान्तर आस्ते या वै कला भगवतस्तामसी समाख्यातानन्त इति सात्वतीया द्रष्टृदृश्ययोः
सङ्कर्षणमहमित्यभिमानलक्षणं यं सङ्कर्षणमित्याचक्षते ॥ १ ॥

śrī-śuka uvāca tasya mūla-deśe triṁśad-yojana-sahasrāntara āste yā vai kalā bhagavatas tāmasi samākhyātānanta iti sātvaṭīyā draṣṭṛ-dṛśyayoḥ saṅkarṣaṇam aham ity abhimāna-lakṣaṇaṁ yaṁ saṅkarṣaṇam ity ācakṣate.

अर्थ: श्रीशुकदेव गोस्वामी ने कहा: पाताल से तीस हजार योजन नीचे भगवान् के उस अंश का निवास है जिसे सात्वत भक्त अनन्त कहते हैं, जो तमोगुण के अधिष्ठाता हैं; क्योंकि वे ही उस “मैं, भोक्ता हूँ” के भाव के अधिष्ठाता हैं जिससे द्रष्टा स्वयं को दृश्य से पृथक् मान बैठता है, इसीलिए वे संकर्षण कहलाते हैं। (स्कन्ध 5, अध्याय 25, श्लोक 1)

स्तुति का यह गीत आरम्भ होने से पहले श्रीशुक एक गम्भीर बात कह देते हैं। यह भाव कि “मैं ही भोक्ता हूँ, और यह संसार मेरे भोग के लिए है” — वही भाव जिससे आत्मा अपना स्थान भूल जाती है, और कभी-कभी तो भगवान् के साथ अपनी एकता तक का दावा कर बैठती है — यह, श्रीशुक कहते हैं, आत्मा की अपनी निजी भूल नहीं है; यह स्वयं संकर्षण की ही व्यवस्था है, वह छाया जो वे बद्ध मन पर डालते हैं। इसीलिए मायावादी का यह उद्घोष कि “मैं ब्रह्म हूँ,” जब वह प्रेमपूर्ण शरणागति के बिना कहा जाए, कोई मुक्ति नहीं अपितु इसी भ्रम का एक सूक्ष्मतर वस्त्र मात्र है। इस अध्याय का शेष भाग हमें सच्चा उपाय शान्तिपूर्वक दिखाता है: भगवान् होने का झूठा दावा नहीं, अपितु उनके नाम और महिमा को विनम्रतापूर्वक सुनना — जो अकेला ही उस ग्रन्थि को खोलता है जिसे संकर्षण स्वयं बाँधते हैं।

और वे क्या धारण करते हैं? उनके सहस्र फणों में से केवल एक पर यह समूची विशाल पृथ्वी — अपने समस्त पर्वतों, समुद्रों और असंख्य प्राणियों सहित — टिकी हुई है, और वहाँ वह एक छोटे-से सरसों के दाने से अधिक बड़ी नहीं दिखती।

यस्येदं क्षितिमण्डलं भगवतोऽनन्तमूर्तेः सहस्रशिरस एकस्मिन्नेव शीर्षणि ध्रियमाणं सिद्धार्थ इव लक्ष्यते ॥ २ ॥

yasyedaṁ kṣiti-maṇḍalaṁ bhagavato 'nanta-mūrteḥ sahasra-śirasa ekasminn eva śīrṣaṇi dhriyamāṇaṁ siddhārtha iva lakṣyate.

अर्थ: यह समूची पृथ्वी, अनन्त के रूप में प्रकट भगवान् के सहस्र शीर्षों में से केवल एक पर धारण की हुई, एक सरसों के दाने से अधिक बड़ी नहीं दिखती। (स्कन्ध 5, अध्याय 25, श्लोक 2)

उनके क्रोध से जन्मे रुद्र

फिर भी वही भगवान् जो लोकों को इतनी कोमलता से धारण करते हैं, अपने भीतर वह शक्ति भी रखते हैं जो एक दिन उन्हें समेट लेती है। जब प्रलय का नियत समय आता है और वे संकल्प करते हैं कि विश्व को अपने में वापस खींच लें, तब एक अद्भुत और भयानक बात प्रकट होती है। उनकी सुन्दर भ्रुकुटियों के बीच के स्थान से — जो अब एक सुन्दर, राजसी क्रोध में तनी हुई हैं — प्रलय के अधिष्ठाता प्रकट होते हैं, संकर्षण नाम से, ग्यारह रूपों में व्यूहित, त्रिनेत्र, त्रिशूल ऊपर उठाए हुए।

यस्य ह वा इदं कालेनोपसज्जिहीर्षतोऽमर्षविरचितरुचिरभ्रमद्भुवोरन्तरेण साङ्कर्षणो नाम रुद्र एकादशव्यूहस्यक्षस्त्रिशिखं
शूलमुत्तम्भयन्नुदतिष्ठत् ॥ ३ ॥

yasya ha vā idaṁ kālenopasañjihīṛṣato 'marṣa-viracita-rucira-bhramad-bhruvor antareṇa sāṅkarṣaṇo nāma rudra ekādaśa-vyūhas try-akṣas tri-sīkhaṁ śūlam uttambhayann udatiṣṭhat.

अर्थ: जब समय आने पर वे इस विश्व को समेटना चाहते हैं, तब उनकी भ्रुकुटियों के बीच से — जो क्रोध में तनी होने पर भी सौन्दर्य से पूर्ण हैं — प्रलय के अधिष्ठाता संकर्षण नाम से प्रकट होते हैं, ग्यारह रूपों में व्यूहित, त्रिनेत्र, त्रिशूल ऊपर उठाए हुए। (स्कन्ध 5, अध्याय 25, श्लोक 3)



प्रलय के लिए नियत समय पर, भगवान् अनन्त की तनी हुई भ्रुकुटियों के बीच से त्रिनेत्र प्रलय-रुद्र प्रकट होते हैं, ग्यारह रूपों में व्यूहित और त्रिशूल ऊपर उठाए हुए (श्लोक 3)।

उनके चरण-कमलों में नाग-राज

किन्तु प्रलय आज उनका भाव नहीं है; आज तो उनकी उपासना होती है, अर्चना होती है, और उनसे प्रेम किया जाता है। श्रेष्ठ भक्तों के साथ, अनन्य और हृदय से भरी भक्ति में, उनके चरणों में झुककर नाग-राज भगवान् के चरण-कमलों के माणिक-सम उज्ज्वल, गोल नखों में झाँकते हैं — और वहाँ, मानो चमकते दर्पणों में, वे उपासकों के प्रसन्न मुख प्रतिबिम्बित देखते हैं, जिनके कपोल उनके देदीप्यमान कुण्डलों की आभा से जगमगाते हैं — एक ऐसा दृश्य जो प्रत्येक हृदय को आनन्द से भर देता है।

उनके निकट नाग-जाति की अविवाहित राजकुमारियाँ भी आती हैं, जो उनकी लम्बी, हिम-सम श्वेत भुजाओं पर अगुरु, चन्दन और केसर का सुगन्धित लेप लगाती हैं, और उनका आशीर्वाद चाहती हैं; लज्जायुक्त और प्रेम से भरी, वे उनके मुख-कमल की ओर देखती हैं, जबकि उनके स्वयं के रक्ताभ नेत्र, कोमल और अर्ध-निमीलित, उन पर एक करुणा-भरी दृष्टि डालते हैं। और इस प्रकार वही भगवान् अनन्त — अनन्त गुणों के सागर, देवताओं में सबसे प्राचीन — वहाँ समस्त लोकों के कल्याण के लिए निवास करते हैं, अभी के लिए उस महान् क्रोध के वेग को रोके हुए जो केवल प्रलय की घड़ी का है।



नाग-राज और नाग-जाति की कन्याएँ भगवान् अनन्त के चरण-कमलों में झुककर उपासना अर्पित करती हैं, जिनकी करुणा-दृष्टि उनके हृदयों को आनन्द से भर देती है (श्लोक 4-6)।

नील वस्त्र में, हल धारण किए

एक भक्त उनका ध्यान कैसे करे? श्रीशुक हमें उनका स्वरूप ही दे देते हैं। देवताओं और असुरों, नागों और सिद्धों, गन्धर्वों, विद्याधरों और मुनियों के समूह निरन्तर उनका ध्यान करते हैं। सदा प्रसन्न, उनके नेत्र मानो किसी दिव्य मद की मधुरता में विचरण करते हुए, वे अपने सखाओं और देव-गणों के प्रमुखों को अपने मनोहर, कृपापूर्ण वचनामृत से आनन्दित करते हैं। नील वस्त्र धारण किए, एक कान में केवल एक कुण्डल पहने, वे अपना एक सुन्दर हाथ अपने हल के ऊपरी भाग पर टिकाए रहते हैं — और अपने कन्धों पर, जैसे इन्द्र का महान् हाथी अपनी स्वर्ण-कक्षा पहनता है, वे अपनी वन-माला वैजयन्ती पहनते हैं, जिसकी शोभा उन भौरों के गुंजार से और भी बढ़ जाती है जो सदा-नवीन, कभी न मुरझाने वाले तुलसी-पुष्पों के मधु से मत्त हैं।

ध्यायमानः सुरासुरोगसिद्धगन्धर्वविद्याधरमुनिगणैरनवरतमदमुदितविकृतविह्वललोचनः सुललितमुखरिकामृतेनाप्यायमानः
स्वपार्षदविबुधयूथपतीनपरिम्लानरागनवतुलसिकामोदमध्वासवेन माद्यन्मधुकरव्रातमधुरगीतश्रियं वैजयन्तीं स्वां वनमालां नीलवासा
एककुण्डलो हलककुदि कृतसुभगसुन्दरभुजो भगवान्महेन्द्रो वारणेन्द्र इव काञ्चनीं कक्षामुदारलीलो बिभर्ति ॥ ७ ॥

*dhyāyamānaḥ surāsuroraga-siddha-gandharva-vidyādhara-muni-gaṇair anavarata-mada-
mudita-vikṛta-vihvala-locanaḥ sulalita-mukharikāmṛtenāpyāyamānaḥ sva-pārṣada-vibudha-
yūtha-patīn aparimlāna-rāga-nava-tulasikāmoda-madhv-āsavena mādyan madhukara-vrāta-
madhura-gīta-śriyaṁ vaijayantīm svām vanamālām nīla-vāsā eka-kuṇḍalo hala-kakudi kṛta-
subhaga-sundara-bhujo bhagavān mahendro vāraṇendra iva kāñcanīm kakṣām udāra-līlo
bibharti.*

अर्थ: देवताओं और असुरों, नागों, सिद्धों, गन्धर्वों, विद्याधरों और मुनियों द्वारा निरन्तर ध्यान किए जाते, सदा प्रसन्न, उनके नेत्र मानो मधुर मद में घूमते हुए, वे अपने पार्षदों और स्वर्गिक समूहों के नायकों को अपने कृपापूर्ण वचनों के अमृत से प्रसन्न करते हैं। नील वस्त्र धारण किए और एक कुण्डल पहने, वे एक सुन्दर हाथ अपने हल पर टिकाए रहते हैं और — इन्द्र के महान् हाथी के समान जो अपनी स्वर्ण-कक्षा पहनता है — वे अपनी वन-माला वैजयन्ती पहनते हैं, जो सदा-नवीन तुलसी-पुष्पों के मधु से मत्त भौरों के गुंजार से गूँजती है। (स्कन्ध 5, अध्याय 25, श्लोक 7)



नील वस्त्र धारण किए, एक कुण्डल पहने, एक हाथ अपने हल पर टिकाए और वैजयन्ती माला से सुशोभित, भगवान् अनन्त का ध्यान देवता, ऋषि और स्वर्गिक प्राणी करते हैं (श्लोक 7)।

वे हृदय में प्रवेश करते हैं, और नारद उनकी स्तुति गाते हैं

यही वह भगवान् हैं जो हमसे बहुत नीचे दूर नहीं रहते, अपितु निकट आते हैं। किसी सच्चे गुरु के मुख से सुने जाकर और प्रेमपूर्ण चिन्तन में धारण किए जाकर, संकर्षण मुक्ति की कामना करने वालों के हृदय में प्रवेश करते हैं और वहाँ अज्ञान की कठोर ग्रन्थि को शीघ्र काट डालते हैं — वह ग्रन्थि जो अनादि कर्म-वासनाओं से बँधी है और तीनों गुणों — सत्त्व, रजस् और तमस् — से बुनी है। उनकी महिमा का गान करना स्वयं एक पावन आनन्द है। और इसीलिए श्रीशुक हमारे लिए स्मरण करते हैं कि किस प्रकार स्वयम्भू ब्रह्मा के पुत्र, महान् नारद, कभी तुम्बुरु गन्धर्व के साथ ब्रह्मा की सभा में खड़े होकर इसी भगवान् की महिमा का गान करने अपनी वाणी उठाई।

नारद का स्तुति-गीत

नारद विस्मय से आरम्भ करते हैं, यह स्वीकार करते हुए कि परमात्मा के मार्ग पूर्णतया नहीं जाने जा सकते: वह वास्तविकता, जिसके मात्र दृष्टिपात से प्रकृति के गुण — सत्त्व और अन्य, जो सृष्टि, पालन और प्रलय के कारण हैं — गतिशील होते हैं, जिसका स्वरूप शाश्वत और अकारण है, और जिसने एक होकर भी अपने भीतर यह समस्त बहुरूप विश्व धारण किया — उसे भला कोई सचमुच कैसे जान सके? और फिर भी, सन्त गाते हैं, हम पर असीम करुणा से उसी वास्तविकता ने शुद्ध, अमिश्रित सत्त्व का एक रूप धारण किया, और उसके द्वारा वे अपनी निर्दोष लीलाएँ करते हैं, अपने भक्तों के हृदयों को आकर्षित और वशीभूत करने के लिए।

फिर नारद सबसे कोमल सत्य को वाणी देते हैं — कि इस भगवान् की करुणा उससे भी अधिक निकट है जितनी की हम आशा करने का साहस करें।

यन्नाम श्रुतमनुकीर्तयेदकस्मा-
दार्तो वा यदि पतितः प्रलम्बनाद्वा ।
हन्त्यंहः सपदि नृणामशेषमन्यं
कं शेषाद्भगवत आश्रयेन्मुमुक्षुः ॥ ११ ॥

*yan-nāma śrutam anukīrtayed akasmād āрто वा यदि patitaḥ pralambhanād vā hantya aṁhaḥ
sapadi nṛṇām aśeṣam anyam kaṁ śeṣād bhagavata āśrayen mumukṣuḥ*

अर्थ: यदि कोई पतित, पीड़ित मनुष्य भी उनके नाम का उच्चारण करे — चाहे वह गुरु से सुना हो, संयोगवश कहा गया हो, या उपहास में ही कहा गया हो — तो वह तत्काल मनुष्यों के समस्त पापों का नाश कर देता है। तब मुक्ति का इच्छुक भगवान् शेष के अतिरिक्त और किसकी शरण ले? (स्कन्ध 5, अध्याय 25, श्लोक 11)

फिर उनकी स्तुति भगवान् की अमेय महानता की ओर मुड़ती है, इस विस्मय से कि वही अनन्त, जो सबको धारण करते हैं, स्वयं गिने या समेटे नहीं जा सकते।

मूर्धन्यर्पितमणुवत्सहस्रमूर्ध्नो
भूगोलं सगिरिसरित्समुद्रसत्त्वम् ।
आनन्त्यादनिमित्तविक्रमस्य भूमनः
को वीर्याण्यधिगणयेत्सहस्रजिह्वः ॥ १२ ॥

*mūrdhany arpitam aṇuvat sahasra-mūrdhno bhū-golaṁ sagiri-sarit-samudra-sattvam ānantiyād
animita-vikramasya bhūmnaḥ ko vīryāṇy adhi gaṇayet sahasra-jihvaḥ*

अर्थ: एक हज़ार जिह्वाओं से युक्त होकर भी भला कौन उस असीम भगवान् के पराक्रमों को गिन सके, जिनका बल अमेय है, और जिनके सहस्र शीर्षों में से केवल एक पर यह पृथ्वी — अपने पर्वतों, नदियों, समुद्रों और प्राणियों सहित — एक तुच्छ अणु के समान रखी हुई है? (स्कन्ध 5, अध्याय 25, श्लोक 12)

और नारद का गीत उसी विस्मय पर विश्राम पाता है जिससे वह आरम्भ हुआ था: कि भगवान् समूची सृष्टि का भार अनायास लीला में धारण करते हैं, अपने ही स्वरूप के अतिरिक्त किसी सहारे की आवश्यकता के बिना।

एवम्प्रभावो भगवाननन्तो

दुरन्तवीर्योरुगुणानुभावः ।

मूले रसायाः स्थित आत्मतन्त्रो

यो लीलया क्षमां स्थितये बिभर्ति ॥ १३ ॥

*evam-prabhāvo bhagavān ananto duranta-vīryoru-guṇānubhāvaḥ mūle rasāyāḥ sthita āma-
tantro yo līlayā kṣmām sthitaye bibharti*

अर्थ: ऐसी है भगवान् अनन्त की महिमा, जो अगाध शक्ति और असंख्य गुणों से युक्त हैं, जो — लोकों के आधार पर स्थित और अपने ही स्वरूप के अतिरिक्त किसी से असमर्थित — समूची सृष्टि के पालन के लिए पृथ्वी को केवल लीला में धारण करते हैं। (स्कन्ध 5, अध्याय 25, श्लोक 13)



ब्रह्मा की सभा में, देवर्षि नारद, तुम्बुरु गन्धर्व के साथ, अपनी वीणा उठाकर भगवान् अनन्त की महिमा का गान करते हैं (श्लोक 9-13)।

श्रीशुक का समापन वचन

नारद के स्तुति-गीत की गूँज के साथ, श्रीशुक कोमलता से राजा परीक्षित की ओर मुड़ते हैं और लोकों का अपना दीर्घ वर्णन समाप्ति की ओर लाते हैं। ये प्रदेश, ऊँचे और नीचे, इस विश्व में वे एकमात्र गति हैं जिन तक आत्माएँ पहुँचती हैं, प्रत्येक अपने-अपने कर्मों के अनुसार, सब भगवान् द्वारा रचित; और उन्होंने इनका वर्णन, वे कहते हैं, ठीक वैसे ही किया है जैसे उन्होंने स्वयं अपने पूज्य पिता एवं गुरु वेदव्यास से सीखा। उन्होंने राजा के प्रश्नों का पूर्ण उत्तर दे दिया है, कर्मपूर्ण जीवन से फलित होने वाली विविध — उच्च और नीच — गतियों का वर्णन करते हुए। अब और, वे उस शान्ति के साथ पूछते हैं जो सब कुछ अर्पित कर चुकी है, कहने को क्या शेष है?

इस अध्याय को प्रमुख शिक्षाएँ

भगवान् स्वयं सबकी नींव हैं। प्रत्येक लोक के नीचे, प्रत्येक उस सहारे के नीचे जिसका हम नाम ले सकें, भगवान् अनन्त हैं, जो सबको एक ही फण पर धारण किए हुए हैं और अपने ही स्वरूप के अतिरिक्त किसी सहारे की आवश्यकता नहीं रखते। जब हमें लगे कि हमारे नीचे की भूमि खिसक रही है, तब यह अध्याय शान्ति से हमें स्मरण कराता है कि सचमुच हमें कौन थामे हुए है।

उनकी शक्ति असीम है, फिर भी उनका स्पर्श कोमल है। समूची पृथ्वी, अपने समस्त पर्वतों और समुद्रों सहित, उन पर एक सरसों के दाने के समान, एक अणु के समान टिकी है। इतनी अकल्पनीय शक्ति, और फिर भी वे इसे परिश्रम से नहीं, अपितु लीला में धारण करते हैं — इस बात का चित्र कि परमात्मा उन जीवनों को कितनी सहजता से सँभालते हैं जिन्हें हम इतना भारी अनुभव करते हैं।

उनका क्रोध भी लोकों के कल्याण की सेवा करता है। उनकी तनी भ्रुकुटियों से प्रलय के रुद्र प्रकट होते हैं, और फिर भी श्रीशुक हमें बताते हैं कि वे उस वेग को रोके रहते हैं, उसे उसकी उचित घड़ी तक धारण किए। वही भगवान् जो एक दिन विश्व को समेट लेंगे, अभी उसे प्रेम से थामे हुए हैं — हमें स्मरण कराते हुए कि उनके हाथों में अन्त भी करुणा के ही कार्य हैं।

उनका पावन नाम पतितों का भी उद्धार करता है। नारद सबसे आशा-भरे सत्य का गान करते हैं: कि उनका नाम, किसी पीड़ित, पतित आत्मा द्वारा भी उच्चारित — संयोगवश, या उपहास में भी — पल भर में समस्त पाप धो देता है। कोई भी उस करुणा की पहुँच से बाहर नहीं; शरण का द्वार सबके लिए खुला है।

उनके विषय में सुनना ही कृपा है। किसी सच्चे गुरु से सुने जाकर और हृदय में धारण किए जाकर, भगवान् भीतर प्रवेश करते हैं और अज्ञान की ग्रन्थि काट देते हैं। हमें आरम्भ करने के लिए पूर्ण होने की आवश्यकता नहीं — हमें केवल सुनना है, स्मरण करना है, और स्तुति करनी है, और शेष वे स्वयं करते हैं।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

जिस प्रकार पंचम स्कन्ध लोकों की अपनी दीर्घ यात्रा को समाप्त करता है, उसमें एक विशेष माधुर्य है। श्रीशुक ने द्वीपों और समुद्रों, स्वर्गों और अधोलोकों, अगणित पर्वतों को नाप लिया — और फिर, उन सबके ठीक तल पर, उन्हें शून्यता नहीं, अपितु एक पुरुष मिलते हैं: नील-श्याम, माला पहने, कोमल नेत्रों वाले, समूची सृष्टि की विशालता को एक बीज के समान सहज ही धारण किए हुए। और इतने विशाल प्रेम-श्रम के बदले वे हमसे क्या माँगते हैं? कुछ नहीं, केवल यह कि हम उनके विषय में सुनें, उनका नाम अपने अधरों पर लें, और उन्हें निकट आने दें। नारद, जिन्होंने प्रत्येक लोक में विचरण किया है, अपना गीत उन आश्चर्यों पर नहीं, जो उन्होंने देखे हैं, अपितु इस एक आश्चर्य पर व्यय करते हैं — कि ऐसे भगवान् इतनी सहजता से प्रसन्न हों, उद्धार करने में इतने शीघ्र हों। जब हमारे अपने भार बहुत भारी लगें, तब यह स्मरण करना उपचारक है कि पृथ्वी स्वयं उनके शीश पर एक सरसों का दाना है, और वही हाथ जो लोकों को धारण करता है, सदा हमारी ओर बढ़ रहा है।

एक दैनिक भक्ति-साधना

आज, वह साधना अपनाइए जिसकी नारद इतनी प्रशंसा करते हैं: भगवान् के पावन नाम का प्रेमपूर्ण स्मरण। आप जो भी भार ढो रहे हैं — कोई चिन्ता, कोई कर्तव्य, कोई भय — उसे एक क्षण के लिए रख दीजिए और कोमलता से जपिए, “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” ऐसा करते हुए, इस अध्याय द्वारा दिया गया चित्र मन में लाइए: समूची पृथ्वी, अपनी समस्त चिन्ताओं सहित, भगवान् अनन्त के फण पर एक सरसों के दाने से

अधिक भारी नहीं। अपने भार को भी वहीं टिकने दीजिए। और यदि सम्भव हो, तो आज उनकी महिमा की एक पंक्ति किसी अन्य आत्मा से भी बाँटिए, क्योंकि उनके विषय में सुनना और उनके विषय में बोलना ही उनकी करुणा का आरम्भ है।

उपसंहार

पंचम स्कन्ध का पचीसवाँ अध्याय लोकों के सर्वेक्षण को भगवान् अनन्त की एक स्तुति से पूर्ण करता है, उस अन्तहीन भगवान् की जो पाताल से बहुत नीचे निवास करते हैं और अपने सहस्र फणों में से एक ही फण पर समूची पृथ्वी को थामे हुए हैं, जहाँ वह एक सरसों के दाने से अधिक बड़ी नहीं दिखती। उनकी क्रोधपूर्ण भ्रुकुटियों से प्रलय के रुद्र प्रकट होते हैं, जिन्हें वे लोकों के कल्याण के लिए रोके रहते हैं; उनके चरण-कमलों में नाग-राज और उनकी कन्याएँ प्रेमपूर्ण उपासना में झुकते हैं; और, नील वस्त्र में एक कुण्डल और अपने हल के साथ, उनका ध्यान देवता और ऋषि निरन्तर करते हैं। जो उनके विषय में सुनते हैं उनके हृदयों में प्रवेश करके, वे अज्ञान की ग्रन्थि काट देते हैं — और ब्रह्मा की सभा में, नारद ने गाया कि उनका नाम, पतितों द्वारा भी उच्चारित, समस्त पाप का नाश करता है, और कि वे पृथ्वी को अनायास लीला में धारण करते हैं, स्वयं-आश्रित और सर्वोच्च। इस प्रकार लोकों की दीर्घ यात्रा वहीं समाप्त होती है जहाँ सब कुछ टिका है: भगवान् की असीम करुणा पर।

श्रीमद्भागवतम् की दिव्य विद्या हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण, पंचम स्कन्ध, पंचविंश अध्याय, “A supplement to the description of the subterranean system।”
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश-रूप में। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद अथवा टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संरक्षण अथवा समर्थन का कोई भाव अभिप्रेत नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-5-chapter-25-the-glories-of-lord-ananta-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञानम् • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

